बीस भारतीय भाषाओं में छपने तथा सर्वाधिक बिकने वाली 'अमर चित्र कथा' की शुरुआत सत्तर के दशक में तब हुई जब सामाजिक-आर्थिक कारणों से भारतीय शहरी समाज संयुक्त से एकल परिवार की तरफ बढ़ना शुरु हुआ था। बच्चों के लिए परिवार में बुजुर्गों और वयस्कों के रिक्त होते स्थान को भरने में अमर चित्र कथा एक हद तक सफल हुई लेकिन व्यावसायिक बाजार में अपनी गहरी जगह बनाने के लिए इसने पौराणिक कथाओं और ऐतिहासिक चरित्रों को चुना। एक तरफ जहां 'रिक्तता' को भरने का काम किया वहीं इसने भावी पीढ़ी में पौराणिक और पितृसत्तात्मक मूल्यबोध विकसित करने का काम भी किया। यह लेख इस बाल पत्रिका के बजार में पैठ बनाने और इसके विस्तार के लिए इस्तेमाल किए गए लोकप्रिय तरीकों की पड़ताल करता है।

अमर चित्र कथा

एक 'भारतीय' चित्र कथा की किताब बनना

आर्यक गुहा

मैं आजादी के बाद के भारत में एक मशहूर सांस्कृतिक उत्पाद 'अमर चित्र कथा' की पैदाइश और उसके विकास पर चर्चा करूंगा। 1960 के दशक के दूसरे हिस्से में सबसे पहले इंडिया बुक हाऊस, मुंबई (तब की बंबई) से प्रकाशित होने वाली चित्र कथा की यह शृंखला अपने किस्म की पहली और सबसे ज्यादा बिकने वाली किताब थी। मैं इसके दोनों ही पहलुओं पर आलोचनात्मक ढंग से गौर करूंगा कि यह किताब व्यावसायिक तौर पर कामयाब कैसे हुई और इसने इतनी सांस्कृतिक प्रतिष्ठा कैसे हासिल की। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अमर चित्र कथा का एक-दूसरे के साथ अटूट तरीके से गुंथे, व्यावसायीकरण व संस्कृति के बीच किसी तरह का 'दोहरा इतिहास' या 'खंडित अस्तित्व' है। साहित्य के तौर पर अमर चित्र कथा का दर्जा और उसके बारे में इसकी खुद की समझ या चेतना, बाजार में इसकी जगह के साथ-साथ बदलती रही है। 1960 व 1970 के दशक भारतीय राष्ट्र-राज्य के लिए गहन व आक्रामक पुनर्निर्माण का बहुत ही अहम दौर रहा है। यह पर्चा कुछ ऐसी प्रक्रियाओं की छानबीन करता है जिनके जरिए अमर चित्र कथा ने अपनी पहचान गढ़ी और खुद को इस राष्ट्रीय मकसद के साथ अभिन्न कर लिया।

बेचान के उपलब्ध आंकड़ों के अलावा, इस काम के लिए चित्र कथा शृंखला के मुख्य संपादक अनंत पै के साथ किए गए साक्षात्कार और अमर चित्र कथा के बारे में विभिन्न अखबारों में प्रकाशित लेखों का इस्तेमाल किया जाएगा। मैंने श्री पै का साक्षात्कार तब किया था जब वे अगस्त-सितंबर, 1999 के दौरान मुंबई में ठहरे हुए थे। मैं खासतौर पर तीन संस्मरणों का इस्तेमाल करूंगा जिन्हें पै अपने निजी साक्षात्कारों व अखबारों के लेखों में अक्सर दोहराते हैं। ये संस्मरण श्री पै और उनके दिमाग की उपज अमर चित्र कथा को समझने के लिहाज से अहम हैं।

भारत में अमर चित्र कथा की पहली किताब कृष्ण के आने से पहले भारतीय कहानियों पर बहुत ही कम चित्र कथाएं प्रकाशित होती व बिकती थीं। तब भारतीय महाकाव्यों, रामायण व महाभारत के दो मशहूर चित्र कथा वाले संस्करण मौजूद थे, जो कि एकबारगी परियोजना के तहत बने थे। टाइम्स ऑफ इंडिया जैसे अखबार बच्चों के पन्नों पर चित्र कथा की पट्टी का इस्तेमाल करते थे। एक बार फिर, टाइम्स समूह ने 'इंद्रजाल कॉमिक्स' के तमगे (ब्रैंड) तले चित्र कथा की किताबों को प्रकाशित करना तय करके, पहला कदम उठाया। इन चित्र कथाओं में बेताल (फेंटम के नाम का हिंदी रूपांतर) का पुनर्कथन किया गया और अमेरिकी

लेखक परिचय

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली से 'अमर चित्र कथा' पर पी. एचडी करने के बाद वर्तमान में श्री चैतन्य कॉलेज, हावडा, पश्चिम बंगाल स्टेट यूनिवर्सिटी में अंग्रेजी के प्राध्यापक के तौर पर कार्यरत हैं।

संपर्क : प्राध्यापक अंग्रेजी, श्री चैतन्य कॉलेज, हावडा, प्रफुल्ला नगर उत्तर 24, पैरागंस, पश्चिम बंगाल-743268

मूल के कुछ दूसरे सुपरहीरो या साहसिक कथाओं को लिया गया। अनंत पै इस परियोजना के कर्ता-धर्ता थे। उन्होंने टाइम्स ऑफ इंडिया के प्रबंधन के सामने कुछ चित्र कथाएं बनाने का प्रस्ताव रखा जिनमें भारतीय काल्पनिक चरित्रों (जैसे, कुंजू पिल्लई) की कथाएं हों। आखिर में उनकी योजना ऐसी चित्र कथाओं के प्रकाशन के शुरुआत करने की थी जो सिर्फ भारतीय मूल या भारतीय चरित्रों की कथाओं को छापता हो। इसके कुछ ही समय बाद पै ने टाइम्स ऑफ इंडिया को छोड़ दिया, लेकिन उन्होंने अपनी योजना को हकीकत का जामा पहनाने की ठान ली थी। इसलिए वे तब तक प्रकाशन गृहों के पास जाते रहे जब तक कि उनमें से एक इंडिया पब्लिशिंग हाऊस ने इस योजना पर मंजूरी नहीं दे दी। शुरुआत में उन्होंने विदेशी मूल की परियों की कहानियां चित्र कथा के लाइसेन्स के तले रॉयल्टी का भुगतान करके 'प्राचीन चित्र कथाएं' के नाम से छापीं। ऐसी दस किताबें जैसे, जैक एंड बीन्सटॉक, रेड राइडिंग हुड आदि को कम से कम आठ भाषाओं में छापा। ग्यारहवीं किताब खुद पै ने लिखी और उन्हें उसकी तस्वीरें बनाने के लिए एक कलाकार राम वारीरकर मिल गए, जो उस वक्त एक विज्ञापन एजेन्सी के साथ काम कर रहे थे। इसमें कुछ वक्त लगा, परियोजना का बीज जून 1967 में पड़ा, उस किताब की पहली 20,000 प्रतियां 1969 में छपीं और आखिरकार किताब फरवरी 1970 में प्रकाशित हुई।

चित्र कथा एक ऐसा माध्यम है जिसमें भरपूर संभावनाएं हैं। इसकी कामयाबी तय है क्योंकि इसमें कहानी के साथ-साथ जोरदार दृश्य जुड़े रहते हैं। जैसे-जैसे भारत में शहरी और अर्द्ध-शहरी परिवारों का आकार सिकुड़ा, जिसमें कम से कम एक अभिभावक बाहर काम करता था और दूसरा घरेलू काम-काज संभालता था और उसमें से कहानी सुनाने वाले पारंपरिक दादा-दादी तेजी से गायब होते चले गए।... आम अभिभावक इन कहानियों की मौजूदगी के बारे में जानता था लेकिन उसके पास वह समझ या वक्त नहीं था कि वह उनको अपने बच्चों को सुना सके।

विषय के तौर पर कृष्ण का चुनाव सावधानी के साथ किया गया था, जो भारतीय देवी-देवताओं के समूह में सबसे ज्यादा मशहूर और प्यारे बाल-भगवान हैं। उनके अनुयायियों की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मौजूदगी उल्लेखनीय है। भारत के बाजार उनकी तस्वीरों व छवियों से भरे पड़े हैं। उनकी जन्मगांठ बच्चों और बूढ़ों, दोनों के ही द्वारा एक मांगलिक अवसर की तरह मनाई जाती है। हर गली में युवा उनकी शरारतों का समारोह पूर्वक अभिनय करते हैं। पै जानते थे कि कृष्ण को लेने से उनसे बाजार में कोई चूक हो ही नहीं सकती। शुरुआती 20,000 प्रतियों को बिकने में डेढ़ साल से कुछ ज्यादा ही वक्त लगा। अभी भी कृष्ण, 1999 तक तेरह भाषाओं में छपकर तथा 11 लाख बिककर, अमर चित्र कथा के सबसे ज्यादा बिकने वाले अंकों की सूची में सबसे ऊंचे पायदान पर है।

पै ने इंद्रजाल कॉमिक्स के साथ अपने अनुभवों से यह बात बहुत ही जल्दी सीख ली कि चित्र कथा एक ऐसा माध्यम है जिसमें भरपूर संभावनाएं हैं। इसकी कामयाबी तय है क्योंकि इसमें कहानी के साथ-साथ जोरदार दृश्य जुड़े रहते हैं। जैसे-जैसे भारत में शहरी और अर्द्ध-शहरी परिवारों का आकार सिकुड़ा, जिसमें कम से कम एक अभिभावक बाहर काम करता था और दूसरा घरेलू काम-काज संभालता था और उसमें से कहानी सुनाने वाले पारंपरिक दादा-दादी तेजी से गायब होते चले गए। 1960 के दशक के बाजार में नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित तस्वीरों वाली किताबें, रूसी चित्र-किताबें और खराब तरीके से छापी गई घटिया गुणवत्ता वाली तस्वीरों की किताबें मौजूद थीं, लेकिन किसी में भी चित्र कथा की तरह लिखित कहानी और चित्रों को एक साथ नहीं गूंथा गया था। और तो और इनमें से किन्हीं भी किताबों में हिंदू मिथकों की कहानियों के सबसे बड़े खजाने का इस्तेमाल नहीं किया था। आम अभिभावक इन कहानियों की मौजूदगी के बारे में जानता था लेकिन उसके पास वह समझ या वक्त नहीं था कि वह उनको अपने बच्चों को सुना सके। तो पै के पास अभिभावकों का अनुमोदन शुरू से ही मौजूद था और जरूरत तो वहां पहले से ही थी। पै ने सिर्फ यह किया कि इस जरूरत का इस्तेमाल किया, एक के बाद एक कहानियां चुनीं और उन्हें चित्र कथा में रूपान्तरित कर दिया। इस काम में इस्तेमाल किया गया अकेला माध्यम उनका अपना योगदान था। यह एक बहुत ही अहम दखलंदाजी साबित होने वाली थी- अमर चित्र कथा ने देवी-देवताओं, अवतारों व चमत्कारों को दृश्यों में दिखाने के लिए मानक नियम कायदे मुहैया करवाए। यह न सिर्फ आगे चलकर राह दिखाने वाला काम था बल्कि एकमात्र स्वीकार्य, 'प्रमाणिक' संदर्भ था जिसने बच्चों व उनके अभिभावकों की कल्पना पर राज कर लिया और किसी के भी लिए एक तरह की संदर्भ किताब बन गया जो कि उस तारीख के बाद उस कहानी को सुनाना चाहता था। तब से टी.वी. के धारावाहिक और मिथकीय फिल्में अमर चित्र कथा द्वारा अपनाई गई भारी रेखाओं व यथार्थवादी चित्रों की शैली पर बहुत हद तक निर्भर करते हैं। पहले कुछ अंक मिथकों पर आधारित थे, जैसे, शकुंतला, पांडव राजकुमार, सावित्री, राम, नल और दमयन्ती, हरीशचन्द्र, राम के बेटे, हनुमान तथा महाभारत, पहले अंक-कृष्ण के प्रकाशित होने के बाद के अठारह महीनों प्रकाशित हुए। आज भी बाकी दूसरे सभी वर्गों के अंकों जैसे ऐतिहासिक व लोक कथाओं से मिथकीय अंकों की बिक्री ज्यादा होती है।

पहले तीन सालों में इन सभी मिथकीय किताबों की बिक्री 20,000 से कम हुई। 20,000 किताबों में 10,000 किताबें अंग्रेजी और 5,000-5,000 हिंदी व मराठी की शामिल थीं। ऐतिहासिक किताबों में चाणक्य सबसे पहले प्रकाशित हुई (अगस्त, 1971) और इसके बाद शिवाजी (अक्टूबर, 1971), राणा प्रताप (नवंबर, 1971), गुरू गोविंद सिंह व हर्ष प्रकाशित हुईं। इसमें एक रोचक अपवाद भी था। चाणक्य के ठीक बाद प्रकाशित होने वाली बुद्ध अमर चित्र कथा के वर्गीकरण के मुताबिक 'ऐतिहासिक' प्रकाशन नहीं है। 1970 के दशक के आखिरी हिस्से में अमर चित्र कथा दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं में जैसे, बंगाली, मलयाली, असमी आदि में अनुवादित हो कर सालाना करीब 35 लाख प्रतियां बिकने लगीं। अनंत पै के मुताबिक इस शृंखला के शुरुआत के बाद पहले चार सालों में हर तीसरे महीने में अमर चित्र कथा का एक अंक बाजार में आता रहा। 1973 में हर दो महीने में एक और अगले साल हर माह में एक अंक निकाला जाने लगा। 1975 से, वे हर पखवाड़े में एक अंक निकालने लगे। 1970 के दशक के आखिरी हिस्से में, हर अंक की छपाई बढ़कर 50,000 तक पहुंच गई थी। इसकी बिक्री अपने शिखर पर 1984 में पहुंची। उस वक्त वे हर महीने अंग्रेजी में 60,000 प्रतियां, हिंदी में 25,000, असमी में 8,000 बंगाली व कन्नड़ दोनों में छपती थी। उसी वक्त मेघालय मनोरमा समूह, इसे बेचने के अधिकार खरीदकर, एक सस्ता और छोटा मलयाली अनुवाद छापकर 140,000 अमर चित्र कथा हर साल बेच रहा था। आम महीनों में, सभी भाषाओं में कुल मिलाकर इसकी बिक्री का आंकड़ा करीब 3,00,000 तक पहुंच जाता था, जबकि गर्मियों व त्यौहारों के महीने में इसकी बिक्री बढ़कर 4,00,000 या 5,00,000 तक पहुंच जाती थी। वे अक्सर पुराने अंकों को दोबारा छापते रहते थे। पहले संस्करण के लिए कभी भी आंकड़े ने 1,00,000 की संख्या को पार नहीं किया। आम महीनों में हुई बिक्री के आंकड़ों में एक तिहाई हिस्सा दोबारा छापे गए संस्करणों का होता था। करीब डेढ़ दशकों तक चीजें अच्छी तरह से चलती रहीं। अंदाजन 1980 के दशक के आखिरी हिस्से में बिक्री कम होनी शुरू हो गई। 1991 में सबसे कम बिक्री जवाहरलाल नेहरू वाली किताब की हुई जिसकी सिर्फ 24,000 प्रतियां ही बिकीं। चूंकि मुनाफा कमाने की शुरुआत 40,000 के आंकड़े के बाद शुरू होती थी, इसलिए इंडिया बुक हाऊस ने नियमित रूप से अमर चित्र कथा के नए अंकों को छापना बंद करना तय किया।

लेकिन ऐसे भी अंक थे जो इसके बाद प्रकाशित हुए जैसे स्वतंत्रता संग्राम की कहानी और स्वामी प्रणवानंद। उन्होंने बंपर अंक भी प्रकाशित किए जो कि सामान्य आकार से तीन गुना बड़े थे, लेकिन उनकी कहानियां पुराने अंकों से लेकर उन पर दोबारा काम किया गया था। तीन तरह के अंकों के अलावा (सादे, डीलक्स और बंपर), अमर चित्र कथा ऑडियो कैसेट, एल.पी.रिकॉर्ड, सी.डी. और नेट पर भी उपलब्ध थी और है। 1998 में दूरदर्शन पर इसके मल्टीमीडिया वाले प्रारूप को शृंखलाबद्ध तरीके से कुछ महीनों तक, उस वक्त तक दिखाया गया जब तक कि उसके दिखाए जाने की शर्तों को लेकर रजामंदी खत्म नहीं हो गई।

अमर चित्र कथा की पैदाइश कैसे हुई ? इसका जवाब सिर्फ बाजार के सर्वे से हासिल नहीं किया जा सकता, जिसको कि हम अब तक काम में लेते रहे हैं क्योंकि वह हम पाठकों को ऐतिहासिक विवरण के रूप में सिर्फ एक आंशिक नजरिया ही मुहैया करवाता रहा है। लेकिन हम अमर चित्र कथा के पीछे छुपे भाव का पहचानने से चूक जाएंगे अगर हम अपने आपको सिर्फ आंकड़ों व ढांचागत तर्क के दायरे में ही कैद रखेंगे। अब हम दूसरे विवरणों को देखेंगे। उनका कोई अंत नहीं है। अमर चित्र कथा के बारे में, अमर चित्र कथा के पाठकों के बारे में, पै व उनका मानस पुत्र, पै एक व्यक्ति के तौर पर, पै और उनके पाठक और ऐसे और भी कई हैं। हम उनमें से हरेक को आलोचनात्मक ढंग से देखेंगे और खुद को हरेक मामले में उदाहरणों की कम से कम संख्या तक सीमित रखेंगे और एक उत्पाद के तौर पर अमर चित्र कथा के 'सृजन' को समझने की कोशिश करेंगे।

उस इंसान और उसके उत्पाद (इन दोनों को सभी व्यावहारिक कारणों से एकदम अलग करके देखना मुश्किल है) के बारे में विवरणों की अहमियत ज्यादातर किस्से-कहानियों के तौर पर है। मैंने किस्सों को विवरणों के विविध रूपों में लिया है और अखबारी रपटों को और निजी साक्षात्कारों में दोहराई गई घटनाओं को भी लिया है। कुछ हद तक कोई यह कह सकता है कि अमर चित्र कथा द्वारा सृजित विवरण तो ठीक हैं पर उससे जुड़े और संस्मरण या किस्से जैसे अखबारी रपटों में अक्सर पाए जाने वाले विवरण क्यों ? संस्मरणों पर बात करते समय, किसी को भी जॉन फाइनमैन का एक निबंध दोबारा याद कर लेना चाहिए, जैसा कि उनकी सहमति से स्टीफन ग्रीनब्लैट ने अपनी किताब *लर्निंग* को *कर्स* में उद्धृत किया था। मैं फाइनमैन की प्रस्थापना और बेशक उनकी दलील को

ग्रीनब्लैट द्वारा दिए गए विस्तार को, खासतौर पर इस संबध में उपयोगी व आंखें खोलने वाला पाता हूं। फाइनमैन कहते हैं कि संस्मरण या किस्से जरूरी मानी जाने वाली असलियत का सा असर पैदा करते हैं। 'किसी घटना को घटना के भीतर ही स्थापित करना और यह काम उसे किसी ऐतिहासिक सिलसिले के संदर्भ में रखे बगैर करने से एक प्रासंगिकता पैदा होती है... वह अभी तक सिर्फ इतना करती है कि जिस विवरण को दर्ज करती है उस विवरण को शामिल भी करती है और घुमा या मोड़ भी देती है।' संस्मरणों का असर दरअसल उनकी दोहरी प्रकृति से पैदा होता है। इतना तो कहा जा सकता है कि यह साहित्यिक व काल्पनिक (फिक्शनल) और ऐतिहासिक व संदर्भों के बीच की दरारों या खांचों में झूठ बोलती है। संस्मरण की ताकत इस बात में होती है कि वह अचानक हमारे सामने किसी मतलब को 'उजागर कर देता' है कि उसमें कुछ है- कुछ 'असली'- उद्देश्यपरक विवरण से बाहर। बहुत हाल ही में, ग्रीनब्लैट व कैथरीन गैलांघर ने अपनी किताब *प्रैक्टिसिंग न्यू हिस्टोरिसिज्म,* इस दलील को यह कहकर और विस्तार दिया है कि संस्मरण 'वैकल्पिक/प्रति इतिहास' को बढ़ावा देता है। वे अपने बिंदु को समझाने के लिए ई.पी.थॉमसन, रेमंड विलियम्स व फूको द्वारा किए गए संस्मरणों के 'साहित्यिक' इस्तेमाल का हवाला देते हैं। मैं इस नजरिए का बहुत समर्थन नहीं कर पाता, खासतौर पर इसलिए क्योंकि यहां पर प्रति इतिहास का मतलब जो लिया गया है, जैसा कि लेखक खुद भी बहुत जल्द ही भांप लेते हैं, वह एक पर्याप्त द्वंद्वात्मक गतिविधि के बजाए ज्यादा से ज्यादा एक सातत्य में क्षणभंगुर पल है। कोई नहीं जानता कि यह कब अपनी अलग पहचान को खो बैठेगा। फिर भी, संस्मरणों के संग्रह को इतिहास के एक महत्त्वपूर्ण विकल्प के तौर पर एक अनुशासन के रूप में लेने का विचार किया जा सकता है। इतिहास का मार्गदर्शक सिद्धांत 'प्राकृतिक' या विवेकसंगत सिलसिले का तर्क है। यह हमेशा एक चक्रीय प्रक्रिया होती है। एक संस्मरण या मौखिक विवरण निरंतरता या सातत्य का तर्क प्रदर्शित नहीं करता-इसमें हर बार एक नई शुरुआत होती है। इस बात से कतई इंकार नहीं है कि अमर चित्र कथा की परिघटना को समझने के लिए संस्मरण एक अहम स्रोत हैं। 'असलियत या यथार्थ' इस पूरी अमर चित्र कथा परियोजना का एक हिस्सा है। वास्तव में, कोई यह सोच सकता है कि पूरी अमर चित्र कथा परियोजना संस्मरणात्मक 'असलियत या यथार्थ' का तस्वीरों में प्रस्तुतिकरण है- यह इतिहास और मिथकीय घटनाओं को दोबारा गढ़ती है और चित्र कथा के जरिए उसे पेश करती है जहां पाठक से खुद के वक्त व जगह के आयामों में उस विवरण को 'महसूस करने' की उम्मीद रखी जाती है। पारंपरिक ऐतिहासिक विवरणों में जहां प्रकट तौर पर सिर्फ छात्र बनकर ही रहा जा सकता है, उसकी तुलना में भागीदारी इसे ज्यादा रोचक बना देती है और बुलावा देती है।

कहानी सुनाना एक ऐसी कड़ी मुहैया करवाता है जो पै की गतिविधियों को जोड़ती है। वह अमर चित्र कथा के जरिए और सार्वजनिक सभाओं में कहानी सुनाते हैं, खुद भी कहानी के विषय हैं और अपनी निजी बातचीत व साक्षात्कारों में इस माध्यम के बारे में बात करना पसंद करते हैं। उनकी खुद की और अमर चित्र कथा की पहचान, एक ही काम- कहानी सुनाने से जुड़ी हुई है। उनके लिए यह एक आदत से कुछ ज्यादा ही है। चाहे यह सचेत तौर पर हो या अनजाने में, यह एक कार्यनीति है। हम ऐसी दो कहानियों की छानबीन करेंगे जिनका जिक्र करना पै कभी भी नहीं भूलते या लगभग हर बार उसे बड़ी शिद्दत से दोहराते हैं। मैं उन्हें उसी रूप में रखूंगा जैसी वे मेरे साथ साक्षात्कार में सामने आई थीं :

इस पूरी बातचीत में (पै) चीजों को बेचने के ऐसे उस्ताद के तौर पर कम नजर आते हैं, जिसने अमर चित्र कथा नामक चित्र कथा की किताबों की शुरुआत की, बल्कि एक ऐसे राष्ट्रवादी/देशभक्त व अभिभावक के तौर पर नजर आते हैं जो कि यह महसूस करता है कि इस देश के बच्चों को एक खास दिशा में ले जाने के लिए उनका मार्गदर्शन करने की जरूरत है।

आर्यक गुहा : *अमर चित्र कथा की शुरुआत कैसे हुई ?*

अनंत पै : *मैं सोचता हूं कि अगर तुमने रीडर्स डाइजेस्ट में लिखा मेरा आलेख पढ़ा हो तो मैंने उसमें जिक्र किया है। मैं दिल्ली गया था... उस वक्त बंबई में टी.वी. नहीं था- वह एकदम नई व अनूठी चीज थी। दिल्ली पहला शहर था जिसमें प्रयोगात्मक तौर पर टी. वी. की शुरुआत की गई थी... उसमें एक प्रश्नोत्तरी का मुकाबला चल रहा था। पांच बच्चों में कोई भी एक सरल से सवाल का जवाब नहीं दे सका कि 'राम' की मां का नाम क्या था ?*

आर्यक गुहा : *क्या वह सवाल एकदम से यही था ?*

अनंत पै : *एकदम यही (सवाल को दोहराया)। मुझे ज्यादा नाखुशी इस बात से हुई कि वे ग्रीक मिथकों के बारे में किए गए सवालों के जवाब दे पा रहे थे। मुझे वह सवाल ठीक से याद नहीं है, लेकिन उसने मुझे ज्यादा नाखुश किया। मुझे इस बात में कतई यकीन नहीं है कि राम भगवान हैं या कुछ और हैं (हंसे), लेकिन रामायणा व महाभारता (लेखक जानता है कि ये नाम सही नहीं हैं लेकिन वक्ता द्वारा ऐसे ही बोले गए) इस*

देश की विरासत हैं और इस बात पर तरस ही खाया जा सकता है कि हमारी नौजवान पीढ़ी अपनी संस्कृति से भी अजनबी है। मैं बंबई लौट आया। तब मैंने अपने पारिवारिक दायरे में नजर दौड़ाई... ये नौजवान पीढ़ी अंग्रेजी माध्यम के, कॉन्वेन्ट विद्यालयों में जा रही थी। मैंने उन्हें 1967 की गर्मियों की छुट्टियों में हाथ से लिखी पत्रिका निकालने को प्रोत्साहित किया। मैं उस समय टाइम्स ऑफ इंडिया में पत्रकार था और बेशक उनके यहां पुस्तक विभाग में काम करता था। तो मैंने इन नौजवानों को बढ़ावा दिया... उनमें कुछ बहुत ही उम्दा तस्वीरें, गद्य व कहानियां थीं और उन्होंने मुझे पत्रिका का उद्घाटन करने व उसे जारी करने का काम सौंपा। मैंने (उसे) खोला, उसमें एक तरह के कुमुद (डेफोडिल) पर कविता थी। कुमुद कोई भारतीय फूल नहीं है। हमारे यहां कुमुद होता है, लेकिन कमल हमारा फूल है। हमारे यहां सूरजमुखी है, हमारे यहां जास्मीन है और भी कई फूल हैं। उसमें वड्र्सवर्थ की कविता की नकल थी और इसी तरह एक रॉबर्ट नाम के लड़के की कहानी थी जो कि वैरिंगटन में रहता था और लंदन जाने के सपने देखता था। कहानी बच्चे के लंदन पहुंचने पर खत्म होती थी। अंग्रेज बच्चा लंदन के सपने देखे और उस जगह के बारे में लिखे; इसमें कुछ भी गलत नहीं है, लेकिन जब एक भारतीय बच्चा लंदन के बारे में सपने देखे, विदेशी जगहों व विदेशी चरित्रों के बारे में लिखे तब मैंने यह हकीकत पहचानी कि ये नौजवान पीढ़ी सिर्फ एनिड ब्लाइटन को ही पढ़ती है। एनिड ब्लाइटन की कहानियों के साथ कुछ भी गलत नहीं है लेकिन उन्होंने सिर्फ यही और इसी तरह की दूसरी कहानियां पढ़ी थीं जो कि उनकी संस्कृति से कटी हुई थीं। किसी को तो कुछ करना पड़ेगा...

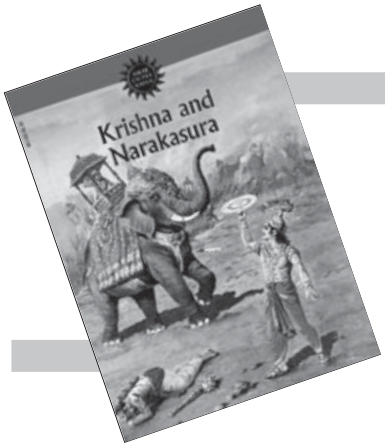

इस पूरी बातचीत में (पै) चीजों को बेचने के ऐसे उस्ताद के तौर पर कम नजर आते हैं, जिसने अमर चित्र कथा नामक चित्र कथा की किताबों की शुरुआत की, बल्कि एक ऐसे राष्ट्रवादी/देशभक्त व अभिभावक के तौर पर नजर आते हैं जो कि यह महसूस करता है कि इस देश के बच्चों को एक खास दिशा में ले जाने के लिए उनका मार्गदर्शन करने की जरूरत है। यह साफ तौर पर व्यक्तिगत व भावनात्मक जरूरत है। वे आदर्श व जिम्मेदार नागरिक हैं जो यह महसूस करते हैं कि इस राज्य में कुछ ऐसा है जो सड़ चुका है या बरबाद हो चुका है और उनकी जिम्मेदारी उसे ठीक करने की है। देखें कि कैसे 'कहानी में एक मोड़' नामक एक अखबारी रपट अमर चित्र कथा की नींव रखे जाने वाले लम्हों का वर्णन करती है :

यह कहानी नई दिल्ली के करोल बाग जंक्शन पर एक सुहानी शाम को शुरू हुई थी। 1967 का साल था और दूरदर्शन की शुरुआत ने राजधानी में हलचल मचा रखी थी। गली में, टी.वी. के डीलर महाराजा एंड संस की दुकान के शोकेस के बाहर राहगीरों का हुजूम जमा था, जो कि एकदम नई चीज घुंमतू फिल्म घर (यानी टी.वी.) की एक झलक पाने को बेताब था।

''एक दुबली-पतली सी मरियल आकृति वाले, पैंतीस के पेटे में पहुंचे हुए, घने व कूचीनुमा गहरे काले बालों वाले व अपनी आंखों में चमक लिए अनंत पै ने इस नजारे को अच्छी तरह से देखने के लिए गली को पार किया तब अमर चित्र कथा की पैदाइश हुई, उन अमर चित्र कथाओं की।''

मेरे साथ किए गए साक्षात्कार में पै द्वारा दिया गया घटना का वर्णन सोच-समझकर ऐसे रोमानीपरक विवरणों को बढ़ावा देता है। मुद्दा यह नहीं है कि पै जानबूझ कर कहानी से मुनाफा कमाने या व्यावसायिक पहलू को छुपा रहे हैं। हम इस हकीकत को नजरअंदाज कर जाते हैं कि यह 'कारण-कार्य संबंध' निकाला या निगमित किया गया है और इसे हालातों के आधार पर गढ़ा नहीं गया। उदाहरण के लिए, हम नहीं जानते कि वे बच्चे कौन थे, वे क्या जानते या महसूस करते थे। पै इन सभी विवरणों के बीचों-बीच होते हैं और उनके तर्क पर कब्जा कर लेते हैं। पाठक या श्रोता को उस दिन के बारे में सोचते वक्त मजबूरन उनके पीछे चलना पड़ता है और वे पै के साथ अहसास करने व सहानुभूति महसूस करने लगते हैं। कोई भी ऐसे अनुभवों की प्रमाणिकता के बारे में सवाल ही नहीं, कुछ भी नहीं पूछ सकता क्योंकि वे एकदम व्यक्तिगत हैं और वे 'संयोग' से घटित हो गए हैं, बजाय इसके कि वे सोची-समझी योजना के तहत मिले हुए सुझाव हों। एक और कहानी है। एक बार फिर, यहां भी उसी साक्षात्कार के दौरान पै ही है :

अनंत पै : *बाद में मेरी इच्छा (अमर चित्र कथा को शुरू करने) को एक और छोटी-सी घटना से बल मिला। उस वक्त तक मैं इंडिया बुक हाऊस से बात कर चुका था और हम अमर चित्र कथा निकालना शुरू कर चुके थे। इंडिया बुक हाऊस में हम सब एक मोटर वाली नाव में बैठकर गेट वे ऑफ इंडिया से एलिफेन्टा की गुफाओं में गए। एक दूसरी मोटर वाली नाव हमारी नाव से ज्यादा तेज रफ्तार से चल रही थी। एक चार साल का मलयाली बच्चा, जिसका नाम तमारा था, मेरे पास*

आया और बोला, 'अंकल, अंकल, जू अ अ म ! क्या यह विदेशी नाव है ?' इसका मतलब एक चार साल के बच्चे का दिमाग इस हद तक धो दिया गया है कि वह यह मानने लगा कि कोई अच्छी चीज तो विदेश से ही आ सकती है। यह मानसिकता बुरी है। आप जो कर सकते हैं उसमें यकीन करें, किसी काम को करने की कोशिश करने से भी पहले, उस काम को करने में यकीन अहम चीज है। अगर वे किसी यकीन के साथ (बगैर) बड़े होते हैं तो इस देश का कोई भविष्य नहीं है। इस बात ने भी इस शृंखला को जारी रखने की मेरी इच्छा को मजबूती दी क्योंकि अमर चित्र कथा को कामयाब होने में तीन साल लगे। अगर मैं गलत नहीं हूं तो पहले साल इसमें करीब 38,000 का नुकसान हुआ था।

बहुत साफ है कि अमर चित्र कथा के पीछे यह एक दूसरा कारण था। अमर चित्र कथा शुरुआत से ही एक जबरदस्त राष्ट्रवादी भाव से संचालित हो रही थी। ब्रिटिश औपनिवेशकता का अनुभव अभी ताजा ही थी और उसका तगड़ा असर अभी जारी रहने वाला था। उस वक्त की तात्कालिक जरूरत राष्ट्र को दोबारा गढ़ने की थी। अमर चित्र कथा ने इस जरूरत को एक उत्पाद के तौर पर पूरी तरह से इस्तेमाल किया और जल्द ही व्यापक पहचान हासिल कर ली। खुले तौर पर इस उत्पाद का मकसद मुख्यतः अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में जाने वाले विद्यालयी बच्चे थे जिनमें (ऐसा माना गया) किसी भी भारतीय चीज को घटिया समझने की आदत का विकास किया जाता था। 1960 के आखिरी हिस्से में इस वर्ग में मुख्यतः उच्च व उच्च-मध्य वर्ग शामिल था। इसका मतलब दो बातें थी : पहली, समुदाय का यह वर्ग 'सांस्कृतिक' उत्पादों का उपभोक्ता था और इस तरह के उत्पादों की प्रकृति को तय करने में निर्णायक कारक था। वे मिलकर जनसमूह का एक बहुत ही अहम हिस्सा बनाते थे। वे हर क्षेत्र में देश की अगुवाई करने वाले नए नागरिक थे (या होने वाले थे), जिनके पास हर तरह के विशेषाधिकार थे। हिंदू मिथकीय कहानियों के पुनर्कथन और भारतीय इतिहास के शानदार इतिहास के शब्दचित्रों के जरिए अमर चित्र कथा उनके लिए एक उपयुक्त आदर्श पेश करना चाहती थी और एक काल्पनिक राष्ट्र की महिमा को फिर से जगाना चाहती थी। राष्ट्र-राज्य के निर्माण के पीछे छुपी सैद्धांतिक बुनियाद की एंडरसन, हॉब्सबाम और कई दूसरों ने बहुत विस्तार से चर्चा की है इसलिए यहां पर उसकी व्याख्या करने की जरूरत नहीं है। इस मामले में जो बात काम की है वह यह है कि अमर चित्र कथा ने कामयाबी के साथ एक समुदाय की साझी याददाश्त को कैसे इस्तेमाल किया और इसी प्रक्रिया में 'महान भारतीय परंपरा' को गढ़ लिया।

अमर चित्र कथा शुरुआत से ही एक जबरदस्त राष्ट्रवादी भाव से संचालित हो रही थी। ब्रिटिश औपनिवेशकता का अनुभव अभी ताजा ही थी और उसका तगड़ा असर अभी जारी रहने वाला था। उस वक्त की तात्कालिक जरूरत राष्ट्र को दोबारा गढ़ने की थी। अमर चित्र कथा ने इस जरूरत को एक उत्पाद के तौर पर पूरी तरह से इस्तेमाल किया और जल्द ही व्यापक पहचान हासिल कर ली।

अनंत पै अपने दूसरे संस्मरण में एक बार फिर इस जरूरत को 'महसूस' करते हैं - भारतीय चीजों के प्रति कम आदर सम्मान के कारण खिन्नता पैदा होना और उससे निबटने के लिए व्यक्तिगत स्तर पर प्रतिक्रिया व्यक्त करना। अब वे पहले की तुलना में ज्यादा अच्छी तरह से जानते हैं कि वे कभी नाकामयाब नहीं होंगे। यह उनके लिए एक आदर्श नागरिक के तौर पर जिम्मेदारी का शंखनाद है। व्यक्तिगत के साथ-साथ राष्ट्र (वादी) वजहों का घालमेल उनकी परियोजना को अपने किस्म की अकेली बना देता है। यह बाजार की अर्थव्यवस्था के सामान्य तर्क से पैदा होने वाली मांग नहीं है, बल्कि इसमें एक बुनियादी जरूरत को पूरा किया जाना है। पाठकों को अपनी पहचान गढ़ने के लिए कहा जा रहा है। यह परियोजना नफे-नुकसान की गणना करने के बजाए एक जुनून और एक मिशन के तहत सोच-समझकर बनाई गई है।

पै शुरुआत से ही अपनी कहानियों की गुणवत्ता और खरेपन के बारे में बेहद सजग थे। हरेक पांडुलिपि सरल लेकिन अच्छी तरह से शोध की हुई और संपादन मंडल, जिसमें उस विषय के विशेषज्ञ होते थे, द्वारा बारीकी से जांची-परखी जाती थी और आखिर में खुद पै भी उसकी जांच-परख करते थे। अमर चित्र कथा में मुखपृष्ठ के भीतरी हिस्से पर पांडुलिपि के लिए इस्तेमाल किए गए स्रोतों का जिक्र किया जाता था। पै ऐसे दृश्यों से बचते थे जो बहुत ही हिंसापरक हों या सांप्रदायिक असहिष्णुता को उकसाएं या अंधविश्वासों को बढ़ावा दें। उन्होंने यह भी पक्का कर लिया कि देश के सभी हिस्सों से कहानियां और चरित्र लिए जाएं। यह बात दर्ज करने लायक है कि अमर चित्र कथा के पाठक वर्ग बालिगों (35 साल से ऊपर) में भी उतना ही था जितना कि 8 से 14 साल की उम्र वाले बच्चों में था, हालांकि इसके सांख्यिकीय आंकड़े उपलब्ध नहीं है। जैसा कि पै का इरादा था, यह बहुत जल्द ही मुख्यधारा का एक स्वीकृत उत्पाद हो गया। आमतौर पर लगाए जाने वाले निरर्थक व्यापार और किताबें छापकर रद्दी में बेच देने के आरोप चित्र कथाओं के साथ भी जुड़े रहे हैं, लेकिन बहुत ही कम। इसके बजाए, इस शृंखला को परिवारों, विद्यालयों व राज्य से एक-सी मंजूरी मिली। किसी ने भी इस बात की जरूरत महसूस नहीं

की कि अमर चित्र कथा मनोरंजक होने के साथ-साथ ज्ञानवर्धक भी है इसलिए इसे नामंजूर कर दिया जाए। हकीकत में, जिस तरह की इज्जत और राज्य का सहारा अमर चित्र कथा को मिला वैसा किसी दूसरी चित्र कथाओं की शृंखला को कहीं मिला हो, ऐसा बहुत ही कम नजर आता है। शैक्षिक संस्थाओं के मुखियाओं, उच्च पदस्थ प्रशासनिक अधिकारियों, केन्द्रीय मंत्रियों, भारत के राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री ने अमर चित्र कथा के विभिन्न अंकों को जारी किया है। पै ने खुद इस मिथक को तोड़ने के लिए नवाचारी कदम उठाए कि चित्र कथाएं सिर्फ मासूम पाठकों को असलियत के बारे में बेतुकी धारणाओं को बनाने के लिए बहकाती हैं। उन्होंने अमर चित्र कथा के बारे में जानकारीपरक पर्चे बांटे और इसके साथ ही ध्यान आकर्षित करने वाले अंदाज में सैद्धांतिक मुद्दों जैसे, 'चित्र कथा क्या है ?' या 'उनकी सामाजिक भूमिका क्या है ?' आदि पर लिखे गए पर्चे बांटे। इन पर्चों में कई मुद्दों जैसे, क्या चित्र कथा आदि बना देने वाला और नुकसानदायक माध्यम है, इस पर विविध सर्वे और जानकारों की राय होती थी और वे याद करते हैं कि कैसे इस शृंखला को पूरी दुनिया में राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय महत्त्व वाली कई संस्थाओं द्वारा कबूल किया गया और कैसे अमर चित्र कथा ने राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा दिया। पै विद्यालयी बच्चों के बीच में खास ऐतिहासिक मुद्दों व घटनाओं पर प्रश्नोत्तरी के मुकाबले भी आयोजित किया करते थे और इनाम के तौर पर अमर चित्र कथा के अंक दिया करते थे। ये प्रदर्शन अमर चित्र कथा की लोकप्रियता को बढ़ाने के साथ-साथ इस दावे को भी मजबूती देते थे कि ये किताबें 'हितकारी' मनोरंजन मुहैया करवाती हैं। उनमें से सबसे महत्त्वपूर्ण नवाचार में नई दिल्ली के 30 विद्यालयों में 961 बच्चों के बीच इतिहास शिक्षण को लेकर एक प्रयोग किया गया था। शिक्षक ने एक प्रकरण बच्चों को बताया और हरेक बच्चे को चयनित प्रकरण पर अमर चित्र कथा का एक अंक पढ़ने के लिए दिया। 40 मिनट के बाद, 15 अंकों वाले वस्तुनिष्ठ सवालों पर परीक्षा ली गई। ज्यादातर बच्चों ने काफी शानदार नतीजे दिए। शिक्षकों ने भी अपनी रपटों में इस बात पर रजामंदी जाहिर की, कि बच्चों ने हर पल का मजा लिया। इस घटना का थोड़े विस्तार में विवरण देने वाली किताबिया में कुछ रेखाचित्र व स्तम्भालेख भी बने थे। उस पर तारीख नहीं दी गई थी और आंकड़ों पर थोड़ी करीबी नजर डालने यह बात उजागर हो जाती है, उसमें आम पाठकों या अभिभावकों के लिए बहानेबाजी से ज्यादा कुछ नहीं है। लेकिन ऐसा लगता है कि अध्ययन के परिणाम शिक्षकों के लिए इस नतीजे तक पहुंचने

के लिए काफी थे कि : 'सीखने के पारंपरिक तरीकों से ज्यादा बेहतर तरीके से (छात्र/छात्रा), इस तरीके से अपना पाठ सीख सकते हैं'। विवरण देने वाली किताबिया इस बात के साथ अपनी बात को खत्म करती है, 'ये टिप्पणियां अमर चित्र कथा के तरीके से सीखने के बारे में बहुत कुछ कहती हैं।'

यहां पर इस बयान की सचाई की जांच करने से हमारा कोई ताल्लुक नहीं है। लेकिन यह अमर चित्र कथा को एक सांस्कृतिक उत्पाद के तौर पर समझने में हमारी मदद करता है। यह उत्पाद के तौर पर एक अलग किस्म की छवि और इसके द्वारा हासिल की गई प्रतिष्ठा को भी समझाता है। जब भी कोई व्यक्ति अमर चित्र कथा खरीदता है तब वह सिर्फ ऐसी चित्र कथा नहीं खरीद रहा है जिसका छुट्टियों में मजा लिया जाना है। इनमें से हरेक किताब से कुछ सकारात्मक व लंबे समय तक असर डालने वाला कुछ सीखा जाना है। पाठक के लिए अब यह मजबूरी नहीं है कि वह अपने व अपने देश के बारे में जानकारी सिर्फ पाठ्यपुस्तकों के पुराने व धुंधलाए पन्नों से ही हासिल करे। चरित्र रंगों में जीवंत हो जाते हैं और हम यह जान भी नहीं पाते कि हम सीख रहे हैं, जिस समय हम कहानी में गहरे डूबे होते हैं। निश्चित तौर पर बच्चे के लिए इससे ज्यादा फायदेमंद कुछ हो ही नहीं सकता। इससे भी ज्यादा अहम बात यह है कि यह पाठकों को अपनी 'परंपरा' में दीक्षित करता है। अमर चित्र कथा को पढ़ना ऐसी वैयक्तिकता की तलाश करना था जो कि उन्हें अपने देश व अपनी पहचान पर नाज करने वाला 'भारतीय' नागरिक बनाती थी। जैसा कि अमर चित्र कथा का एक नारा कहता है, यह 'अपनी जड़ों को जाने वाले रास्ते' की तलाश करना है।

अनंत पै द्वारा सुनाए गए एक दूसरे संस्मरण के साथ मैं अपनी बात को खत्म करूंगा। यह मासूम-सी लगने वाली छोटी-सी 'कहानी' अमर चित्र कथा के करियर के अगले चरण को दिखाती है। एक बार फिर, इस घटना के सही वक्त और दिन का पता नहीं है। संस्मरणों या किस्सों के साथ एक खास बात यह होती है कि उनकी गैर-मापनीय प्रकृति 'हरदम मौजदूगी' का भ्रम पैदा करती है। इतिहास को नकारने का मतलब है कि इस बात से इंकार करना कि वह घटना हो चुकी है, समझी और जज्ब की जा चुकी है। इतिहास से उलट, किसी संस्मरण में आई घटना की अपने आप में अहमियत के अलावा कोई जगह नहीं होती। दूसरे शब्दों में, इस मामले में बयान देने वाला बयान से ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो गया है। कभी खत्म न होने का भी अपना एक जादू या रोमांच होता है। पूरी संभावना है कि यह सब अमर चित्र कथा की शुरुआत होने के काफी वक्त बाद में

शुरू हुआ हो। अब यह ऐसा उत्पाद नहीं है जो बाजार में दूसरी किस्म की चित्र कथाओं या बच्चों के साहित्य के बीच अपनी जगह बनाने के लिए होड़ कर रहा हो। यह अपनी उपयोगिता साबित कर चुका है और वक्त की कसौटी पर खरा उतरा है और इसने पै को बड़े पैमाने पर जाना पहचाना व्यक्ति बना दिया। मैं पै के ही शब्दों में एक घटना पेश करता हूं :

अनंत पै : *एक छोटी सी घटना है... कमरुद्दीन, वह उच्चतम न्यायालय में एक वकील है (और).. . उनकी बीबी (जो कि) खुद भी उच्च न्यायालय में एक वकील है... उनका 7 साल का बच्चा अंबर (उसके साथ आ रहे थे). .. कमरुद्दीन ने कहा, 'बेटा, ये अंकल पै हैं ?' बच्चे ने मुझे गौर से देखा : 'क्या आपको पक्का यकीन है कि ये अंकल (पै) हैं ?'- इस तरह की हैरत उसकी आंखों में थी। यही वह चीज है जिसकी मैं कद्र करता हूं...*

इससे ज्यादा आम और संभावित कुछ हो नहीं सकता। यह एक ऐसी घटना है जिसकी या तो कोई अनदेखी कर देगा या फिर जैसा कि पै न किया कि उसे कई दूसरे यादगार लम्हों की तरह याद रखेगा। लेकिन पै इससे भी ज्यादा कहते हैं। वे इस अनुभव की कद्र बाकी कई दूसरी चीजों, शायद सभी भौतिक इनामों, प्रसिद्धि व सामाजिक प्रतिष्ठा- जो कि उन्होंने अपनी जिंदगी में हासिल की, से ज्यादा करते हैं। जरा इसे बारीकी से देखते हैं। यहां पर वास्तव में हुआ क्या है ? संभवतयाः वह छोटा बालक अमर चित्र कथा का शौकीन पाठक रहा होगा और वहां मौजूद दूसरे दो व्यक्तियों की तुलना में अमर चित्र कथा की 'दुनिया' में ज्यादा जीता रहा होगा। यहां एक आदमी आता है, छोटा-सा, गहरे रंग का, मोटे होठों वाला, जिसका जर्रा-जर्रा दयनीय ढंग से एक नश्वर आम आदमी-सा दिखलाई पड़ता है और जिसका परिचय अंकल पै के तौर पर दिया जाता है, जिसको कि वह सालों या उससे भी ज्यादा वक्त से जानता रहा है। अंकल पै उसके साथ बहुत अर्से से हैं- एक उम्र दराज-सा आदमी जो कि कहानियों के जाल बुनता रहा है। हर बार जब वह नई कहानी कहता है, जादू-सा छा जाता है। कोई भी ठीक से नहीं जानता कि वह कब से कहानी कह रहा है, हालांकि वे उसे जानते हैं। वे सभी सिर्फ यही जानते हैं कि अंकल पै वहां पर अपनी कहानियों की गठरी के साथ होते हैं।

मेरा मानना है कि हालात की तुलना एक सपने के साथ की जा सकती है। फ्रायड के मुताबिक, बच्चे अपनी बगैर दबाई हुई इच्छा की पूर्ति सीधे व सरल तरीके से दर्शाते हैं। इस मामले में बच्चे के यकीन का आग्रह/दबाव बहुत तगड़ा है। यह जागृत अवस्था में बगैर दबाई किसी इच्छा का सीधा रूपान्तरण है। बच्चे की 'गलती' यह है कि, वह असल में जानबूझ कर पै को पहचानने से इंकार कर रहा है जबकि वहां मौजूद बालिग इसे समझ रहे हैं और इसमें बहुत मजा ले रहे हैं। उसे अपने कल्पना में रचे पै को अपने सामने खड़े इंसान से मिलाकर देखने के बजाए कल्पना की दुनिया में ही रहना व सपने देखना जारी रखना चाहिए था। उसकी आंखों में बसी हैरत को पै ने बेइंतिहा तृप्ति के तौर पर पहचाना। वह अचानक लगे झटके से पैदा हुई उलझन है जिसने बच्चे को 'नींद' से जगा देने की धमकी दी है।

> ***अहम बात यह है कि यह पाठकों को अपनी 'परंपरा' में दीक्षित करता है। अमर चित्र कथा को पढ़ना ऐसी वैयक्तिकता की तलाश करना था जो कि उन्हें अपने देश व अपनी पहचान पर नाज करने वाला 'भारतीय' नागरिक बनाती थी। जैसा कि अमर चित्र कथा का एक नारा कहता है, यह 'अपनी जड़ों को जाने वाले रास्ते' की तलाश करना है।***

कोई भी गौर कर सकता है कि अमर चित्र कथा की यात्रा किस दिशा में रही है। यह एक वक्त में राष्ट्रीय संकट की वजह से पैदा हुए लक्षणों को दर्शाती है। यह नई पीढ़ी को सही राह पर लौटा लाने की कसम खाती है। आखिरी उदाहरण में यह खुद एक मिथक बन चुकी है। भावी पीढ़ियों को अमर चित्र कथा 'भारतीय परंपरा' की विरासत के अटूट हिस्से के तौर पर मिलेगी। इसने हरेक भारतीय की किताबों की अलमारी में अपनी स्थाई जगह बना ली है। इस पूरी यात्रा को कैद करने वाले एक अखबारी लेख को उद्धृत करने के लोभ पर काबू पाना मुश्किल है :

एक जमाने की बात है कि यहां पर एक अनाथ बच्चा रहता था, जो कि अक्सर उपहास का पात्र बनता था। छोटा-सा, बहुत सीधा, वह बेढंगे से कपड़े पहनता और उसके ख्यालात भी उतने ही अजीब थे, जैसे रासायनिक इंजीनियर बनना, आजीविका के लिए सिर्फ तस्वीरों के जरिए कहानियां कहना... दुनिया ने उसे अनंत पै के नाम से जाना, भारतीय चित्रकथाओं का पथप्रदर्शक सम्राट। बच्चे उसे अंकल पै कहते थे।

जिस तरीके से अमर चित्र कथा ने भारत के इतिहास व मिथकों से 'घटनाओं' को चुना और उसे पाठकों के समझने के लिए पेश किया, इसने उसे मानवतावादी व राष्ट्रवादी आदर्शों को फैलाने के मकसद के लिए खासतौर पर उपयोगी बना दिया। आदर्श नागरिक के लिए पहले पाठों- नैतिकता और ज्ञान को हर कहानी में गूंथा गया है। हर नई कहानी के साथ हम एक कदम आगे बढ़ते नजर आते हैं। ◆

भाषान्तर : रविकांत